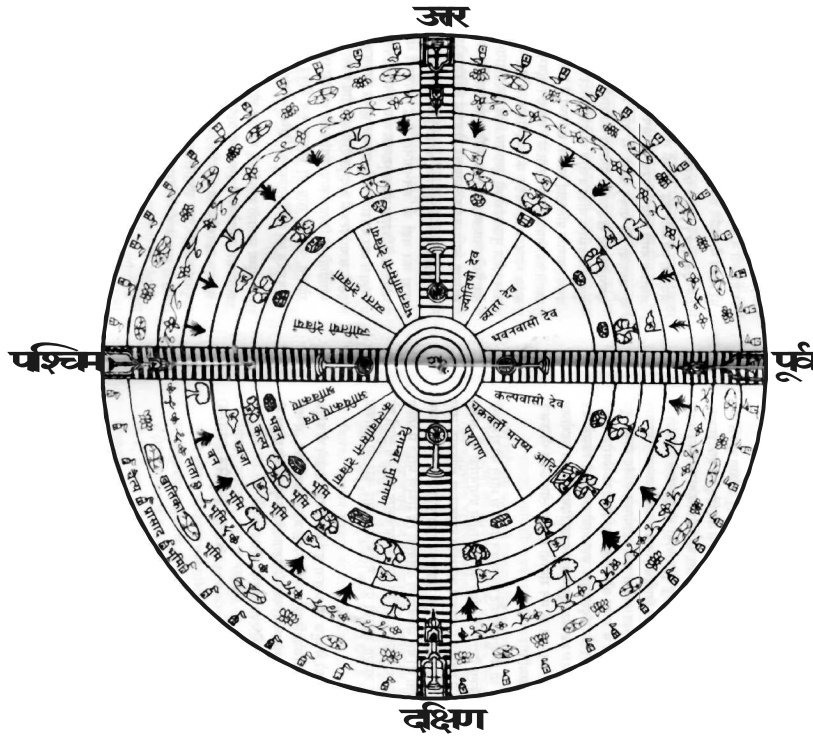


विशद लघु समवशरण विधान



रचयिता : प.पू. आचार्य विशदसागरजी महाराज

- कृति - विशद लघु समवशरण विधान
- कृतिकार - प.पू. साहित्य रत्नाकर, क्षमामूर्ति
आचार्य श्री 108 विशदसागरजी महाराज
- संस्करण - प्रथम, 2010 प्रतियाँ - 1000
- संकलन - मुनि श्री 108 विशालसागरजी महाराज एवं
क्षुल्लक श्री 105 विदर्शसागरजी महाराज,
ब्र. लालजी भैया, सुखनन्दन
- संपादन - ब्र. ज्योति दीदी (982907 9660996425, आस्था,
सपना दीदी
- संयोजन - किरण, आरती दीदी • मो.: 9829127533
- प्राप्ति स्थल - 1. जैन सरोवर समिति, निर्मलकुमार गोधा,
2142, निर्मल निकुंज, रेडियो मार्केट,
मनिहारों का रास्ता, जयपुर मो.: 9414812008
फोन : 0141-2319907 (घर)
2. श्री 108 विशद सागर माध्यमिक विद्यालय
बरौदिया कलाँ, जिला-सागर (म.प्र.)
3. विवेक जैन, 2529, मालपुरा हाऊस,
मोतिसिंह भोमियों का रास्ता, जौहरी बाजार, जयपुर
फोन : 2503253, मो.: 9414054624
4. श्री राजेशकुमार जैन ठेकेदार, ए-107, बुध विहार, अलवर
मो.: 9414016566
5. श्री सरस्वती पेपर स्टोर्स, चाँदी की टकसाल, जयपुर
मो.: 9772220442

पुनः प्रकाश हेतु - 31/- रु.
Irg daU Im ESb {dmZLHmAmOZ {XmH\$ 29-12-2009 go 3-1-2010 V.H\$
Irg\$ {Xa-aO;ZgnOEs lr {d_bSVgong {VeitwamUmanv\$eV

मुद्रक : राजू ग्राफिक आर्ट (संदीप शाह), जयपुर • फोन : 2313339, मो.: 9829050791

g_dbaUckV {d{YEd\$Om_\$I

{d{Y•• समवशरण का व्रत समवशरण की आठ भूमि, तीन कटनी आदि को लक्षित कर दिया जाता है। इसमें 24 व्रत हैं। व्रत के दिन तीर्थकर प्रतिमा का पंचामृत अभिषेक, समवशरण पूजा करके उपवास करें। उत्तम विधि उपवास, मध्यम अल्पाहार एवं जघन्य एकाशन है। व्रत पूर्ण करके उद्यापन में समवशरण रचना बनवाकर प्रतिष्ठा कराना अथवा समवशरण मंडल विधान करना, 24 ग्रंथ आदि का दान देना। जहाँ-जहाँ प्रभु के समवशरण की रचना बनी हुई है उनके दर्शन करना। इस व्रत का फल तत्काल में संपूर्ण मनोरथों की सिद्धि, परम्परा से समवशरण के दर्शन का लाभ और तीर्थकर पद की प्राप्ति आदि भी संभव है।

g_wAM`_SI•• (1) ॐ ह्रीं जगदापद्मविनाशनाय सकलगुणकण्डाय श्रीसर्वज्ञाय अहंपरमेष्ठिने नमः। (2) ॐ ह्रीं समवशरणपद्मसूर्यवृषभादिवर्धमानान्तेभ्यो नमः।

æE`cH\$ dV Ho\$ nWH\$-nWH\$ _SI•• (1) ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थकरसमवशरणसंबंधि-मानसस्थित सर्वजिनप्रतिमाभ्यो नमः। (2) ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थकरसमवशरणसंबंधि-चैत्यप्रासादस्थित सर्वजिनप्रतिमाभ्यो नमः। (3) ॐ ह्रीं खातिकाभूमिवैभवमंडितसमवशरणस्थित चतुर्विंशतितीर्थकरेभ्यो नमः। (4) ॐ ह्रीं लताभूमिवैभवमंडितसमवशरणस्थित चतुर्विंशतितीर्थकरेभ्यो नमः। (5) ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थकरसमवशरणसंबंधि-उपवनभूमिचतुर्दिक् चैत्यवृक्षस्थितसर्वजिनप्रतिमाभ्यो नमः। (6) ॐ ह्रीं ध्वजभूमिवैभवमंडितसमवशरणस्थित चतुर्विंशतितीर्थकरेभ्यो नमः। (7) ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थकरसमवशरणसंबंधि-कल्पवृक्षभूमिचतुर्दिक्-सिद्धावृक्षस्थितसिद्धप्रतिमाभ्यो नमः। (8) ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थकरसमवशरणसंबंधि-भवनभूमिस्थितनवनस्तूपमध्यविराजमानसर्वजिनप्रतिमाभ्यो नमः। (9) ॐ ह्रीं श्रीमंडपभूमिमंडितसमवशरण-विभूतिधारक चतुर्विंशतितीर्थकरेभ्यो नमः। (10) ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थकरसमवशरणसंबंधि-प्रथमकटनीस्थितयक्षेन्द्रमस्तकोपरिविराजमान धर्मचक्रेभ्यो नमः। (11) ॐ ह्रीं द्वितीयकटनीउपरि-अष्टमहाध्वजावैभवधारकचतुर्विंशतितीर्थकरेभ्यो नमः। (12) ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थकरसमवशरणसंबंधि-तृतीयपीठोपरिस्थितगंधकुटीभ्यो नमः। (13) ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थकरसमवशरणसंबंधि-चतुर्विंशतितीर्थकरेभ्यो नमः। (14) ॐ ह्रीं अष्टमहाप्रातिहार्यसमन्वित-चतुर्विंशतितीर्थकरेभ्यो नमः। (15) ॐ ह्रीं अनन्तज्ञानगुणसमन्वितचतुर्विंशतितीर्थकरेभ्यो नमः। (16) ॐ ह्रीं अनन्तदर्शनगुणसमन्वितचतुर्विंशतितीर्थकरेभ्यो नमः। (17) ॐ ह्रीं अनन्तसौख्यगुणसमन्वित-चतुर्विंशतितीर्थकरेभ्यो नमः। (18) ॐ ह्रीं अनन्तवीर्यगुणसमन्वितचतुर्विंशतितीर्थकरेभ्यो नमः। (19) ॐ ह्रीं अष्टादशमहादोषविरहितचतुर्विंशतितीर्थकरेभ्यो नमः। (20) ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थकर-समवशरणस्थितएकोनषष्ट्यधिकचतुर्दश शतगणधरादिअष्टाविंशतिलक्षअष्टचत्वारिंशतसहस्रसर्वमुनिभ्यो नमः। (21) ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थकरसमवशरणस्थितब्राह्मीगणिनीप्रमुख-पंचाशल्लक्ष-पंचाशत्सहस्र-द्वयशतपंचाशत्आर्यिकाभ्यो नमः। AWdIm ॐ ह्रीं समवशरणस्थितब्राह्मीगणिनीप्रमुखपंचाशल्लक्ष-पंचाशत्सहस्रद्वयशतपंचाशदार्थिकावंदितचरणकमलचतुर्विंशतितीर्थकरेभ्यो नमः। (22) ॐ ह्रीं समवशरणस्थितअसंख्यातदेवदेवीवंदितचरणकमलचतुर्विंशतितीर्थकरेभ्यो नमः। (23) ॐ ह्रीं समवशरणस्थितसंख्यातमनुष्यगणश्रावकश्राविका-वंदितचरणकमल चतुर्विंशतितीर्थकरेभ्यो नमः। (24) ॐ ह्रीं समवशरणस्थितपरस्परविरोधविवर्जित संख्याततिर्यग्गणवंदितचरणकमलचतुर्विंशतितीर्थकरेभ्यो नमः।

lr Xod-emO-Jwég_wAM`nyOZ

स्थापना

देव शास्त्र गुरु के चरणों हम, सादर शीष झुकाते हैं।
कृत्रिमाकृत्रिम चैत्य-चैत्यालय, सिद्ध प्रभु को ध्याते हैं।
श्री बीस जिनेन्द्र विदेहों के, अरु सिद्ध क्षेत्र जग के सारे।
हम विशद भाव से गुण गाते, ये मंगलमय तारण हारे।
हमने प्रमुदित शुभ भावों से, तुमको हे नाथ ! पुकारा है।
मम डूब रही भव नौका को, जग में वश एक सहारा है।
हे करुणा कर ! करुणा करके, भव सागर से अब पार करो।
मम हृदय कमल में आ तिष्ठो, बस इतना सा उपकार करो॥

ॐ ह्रीं श्री देव शास्त्र गुरु कृत्रिमाकृत्रिम जिन चैत्य-चैत्यालय अनन्तान्त सिद्ध परमेष्ठी विद्यमान विंशति तीर्थकर सिद्ध क्षेत्र समूह अत्रावतरावतर संवौषट् आह्वानन।

ॐ ह्रीं श्री देव शास्त्र गुरु कृत्रिमाकृत्रिम जिन चैत्य-चैत्यालय अनन्तान्त सिद्ध परमेष्ठी विद्यमान विंशति तीर्थकर सिद्ध क्षेत्र समूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं श्री देव शास्त्र गुरु कृत्रिमाकृत्रिम जिन चैत्य-चैत्यालय अनन्तान्त सिद्ध परमेष्ठी विद्यमान विंशति तीर्थकर सिद्ध क्षेत्र समूह अत्र मम सन्निहिता भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

अष्टक

हम प्रासुक जल लेकर आये, निज अन्तर्मन निर्मल करने।
अपने अन्तर के भावों को, शुभ सरल भावना से भरने॥
श्री देव शास्त्र गुरु सिद्ध प्रभु, जिन चैत्य-चैत्यालय को ध्याये।
हम विद्यमान श्री बीस तीर्थकर, सिद्ध क्षेत्र के गुण गाये॥1॥

ॐ ह्रीं श्री देव शास्त्र गुरु कृत्रिमाकृत्रिम जिन चैत्य-चैत्यालय अनन्तान्त सिद्ध परमेष्ठी विद्यमान विंशति तीर्थकर सिद्ध क्षेत्र समूह जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

हे नाथ ! शरण में आये हैं, भव के सन्ताप सताए हैं।
यह परम सुगन्धित चंदन ले, प्रभु चरण शरण में आये हैं॥
श्री देव शास्त्र गुरु सिद्ध प्रभु, जिन चैत्य-चैत्यालय को ध्याये।
हम विद्यमान श्री बीस तीर्थकर, सिद्ध क्षेत्र के गुण गाये॥2॥

ॐ ह्रीं श्री देव शास्त्र गुरु कृत्रिमाकृत्रिम जिन चैत्य-चैत्यालय अनन्तान्त सिद्ध परमेष्ठी विद्यमान विंशति तीर्थकर सिद्ध क्षेत्र समूह भव ताप विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

हम अक्षय निधि को भूल रहे, प्रभु अक्षय निधी प्रदान करो।
यह अक्षत लाए चरणों में, प्रभु अक्षय निधि का दान करो॥
श्री देव शास्त्र गुरु सिद्ध प्रभु, जिन चैत्य-चैत्यालय को ध्यायें।
हम विद्यमान श्री बीस तीर्थकर, सिद्ध क्षेत्र के गुण गायें॥3॥

ॐ ह्रीं श्री देव शास्त्र गुरु कृत्रिमाकृत्रिम जिन चैत्य-चैत्यालय अनन्तानन्त सिद्ध परमेष्ठी विद्यमान विंशति तीर्थकर सिद्ध क्षेत्र समूह अक्षय पद प्राप्ताय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

यद्यपि पंकज की शोभा भी, मानस मधुकर को हर्षाए।
अब काम कलंक नशाने को, मनहर कुसुमांजलि ले आए॥
श्री देव शास्त्र गुरु सिद्ध प्रभु, जिन चैत्य-चैत्यालय को ध्यायें।
हम विद्यमान श्री बीस तीर्थकर, सिद्ध क्षेत्र के गुण गायें॥4॥

ॐ ह्रीं श्री देव शास्त्र गुरु कृत्रिमाकृत्रिम जिन चैत्य-चैत्यालय अनन्तानन्त सिद्ध परमेष्ठी विद्यमान विंशति तीर्थकर सिद्ध क्षेत्र समूह काम बाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

ये षट् रस व्यंजन नाथ हमें, सन्तुष्ट पूर्ण न कर पाये।
चेतन की क्षुधा मिटाने को, नैवेद्य चरण में हम लाए॥
श्री देव शास्त्र गुरु सिद्ध प्रभु, जिन चैत्य-चैत्यालय को ध्यायें।
हम विद्यमान श्री बीस तीर्थकर, सिद्ध क्षेत्र के गुण गायें॥5॥

ॐ ह्रीं श्री देव शास्त्र गुरु कृत्रिमाकृत्रिम जिन चैत्य-चैत्यालय अनन्तानन्त सिद्ध परमेष्ठी विद्यमान विंशति तीर्थकर सिद्ध क्षेत्र समूह क्षुधा रोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीपक के विविध समूहों से, अज्ञान तिमिर न मिट पाए।
अब मोह तिमिर के नाश हेतु, हम दीप जलाकर ले आए॥
श्री देव शास्त्र गुरु सिद्ध प्रभु, जिन चैत्य-चैत्यालय को ध्यायें।
हम विद्यमान श्री बीस तीर्थकर, सिद्ध क्षेत्र के गुण गायें॥6॥

ॐ ह्रीं श्री देव शास्त्र गुरु कृत्रिमाकृत्रिम जिन चैत्य-चैत्यालय अनन्तानन्त सिद्ध परमेष्ठी विद्यमान विंशति तीर्थकर सिद्ध क्षेत्र समूह मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

ये परम सुगंधित धूप प्रभु, चेतन के गुण न महकाए।
अब अष्ट कर्म के नाश हेतु, हम धूप जलाने को आए॥
श्री देव शास्त्र गुरु सिद्ध प्रभु, जिन चैत्य-चैत्यालय को ध्यायें।
हम विद्यमान श्री बीस तीर्थकर, सिद्ध क्षेत्र के गुण गायें॥7॥

ॐ ह्रीं श्री देव शास्त्र गुरु कृत्रिमाकृत्रिम जिन चैत्य-चैत्यालय अनन्तानन्त सिद्ध परमेष्ठी विद्यमान विंशति तीर्थकर सिद्ध क्षेत्र समूह अष्ट कर्म दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

जीवन तरु में फल खाए कई, लेकिन वे सब निष्फल पाए।
अब विशद मोक्ष फल पाने को, श्री चरणों में श्री फल लाए॥
श्री देव शास्त्र गुरु सिद्ध प्रभु, जिन चैत्य-चैत्यालय को ध्यायें।
हम विद्यमान श्री बीस तीर्थकर, सिद्ध क्षेत्र के गुण गायें॥8॥

ॐ ह्रीं श्री देव शास्त्र गुरु कृत्रिमाकृत्रिम जिन चैत्य-चैत्यालय अनन्तानन्त सिद्ध परमेष्ठी विद्यमान विंशति तीर्थकर सिद्ध क्षेत्र समूह मोक्ष फल प्राप्ताय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

हम अष्ट कर्म आवरणों के, आतंक से बहुत सताए हैं।
वसु कर्मों का हो नाश प्रभु, वसु द्रव्य संजोकर लाए हैं॥
श्री देव शास्त्र गुरु सिद्ध प्रभु, जिन चैत्य-चैत्यालय को ध्यायें।
हम विद्यमान श्री बीस तीर्थकर, सिद्ध क्षेत्र के गुण गायें॥9॥

ॐ ह्रीं श्री देव शास्त्र गुरु कृत्रिमाकृत्रिम जिन चैत्य-चैत्यालय अनन्तानन्त सिद्ध परमेष्ठी विद्यमान विंशति तीर्थकर सिद्ध क्षेत्र समूह अनर्घ पद प्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

श्री देव शास्त्र गुरु मंगलमय हैं, अरु मंगल श्री सिद्ध महन्त।
बीस विदेह के जिनवर मंगल, मंगलमय हैं तीर्थ अनन्त॥

छन्द तोटक

जय अरि नाशक अरिहन्त जिनं, श्री जिनवर छियालिस मूल गुणं।
जय महा मदन मद मान हनं, भवि भ्रमर सरोजन कुंज वनं॥
जय कर्म चतुष्टय चूर करं, दृग ज्ञान वीर्य सुख नन्त वरं।
जय मोह महारिपु नाशकरं, जय केवल ज्ञान प्रकाश करं॥1॥
जय कृत्रिमाकृत्रिम चैत्य जिनं, जय अकृत्रिम शुभ चैत्य वनं।
जय ऊर्ध्व अधो के जिन चैत्यं, इनको हम ध्याते हैं नित्यं॥
जय स्वर्ग लोक के सर्व देव, जय भावन व्यन्तर ज्योतिषेव।
जय भाव सहित पूजे सु एव, हम पूज रहे जिन को स्वयमेव॥2॥
श्री जिनवाणी ओंकार रूप, शुभ मंगलमय पावन अनूप।
जो अनेकान्तमय गुणधारी, अरु स्याद्वाद शैली प्यारी॥

है सम्यक् ज्ञान प्रमाण युक्त, एकान्तवाद से पूर्ण मुक्त।
जो नयावली युत सजल विमल, श्री जैनागम है पूर्ण अमल॥ 3॥
जय रत्नत्रय युत गुरुवरं, जय ज्ञान दिवाकर सूरि परं।
जय गुप्ति समीति शील धरं, जय शिष्य अनुग्रह पूर्ण करं॥
गुरु पञ्चाचार के धारी हो, तुम जग-जन के उपकारी हो।
गुरु आतम बह्य बिहारी हो, तुम मोह रहित अविकारी हो॥4॥
जय सर्व कर्म विध्वंस करं, जय सिद्ध शिला पे वास करं।
जिनके प्रगटे है आठ गुणं, जय द्रव्य भाव नो कर्महनं॥
जय नित्य निरंजन विमल अमल, जय लीन सुखामृत अटल अचल।
जय शुद्ध बुद्ध अविकार परं, जय चित् चैतन्य सु देह हरं॥5॥
जय विद्यमान जिनराज परं, सीमंधर आदी ज्ञान करं।
जिन कोटि पूर्व सब आयु वरं, जिन धनुष पांच सौ देह परं॥
जो पंच विदेहों में राजे, जय बीस जिनेश्वर सुख साजे।
जिनको शत् इन्द्र सदा ध्यावें, उनका यश मंगलमय गावें॥6॥
जय अष्टापद आदीश जिनं, जय उर्जयन्त श्री नेमि जिनं।
जय वासुपूज्य चम्पापुर जी, श्री वीर प्रभु पावापुरजी॥
श्री बीस जिनेश सम्पेदगिरी, अरु सिद्ध क्षेत्र भूमि सगरी।
इनकी रज को सिर नावत हैं, इनका यश मंगल गावत हैं॥7॥

(आर्या छन्द)

पूर्वाचार्य कथित देवों को, सम्यक् वन्दन करें त्रिकाल।
पञ्च गुरु जिन धर्म चैत्य श्रुत, चैत्यालय को है नत भाल॥

ॐ ह्रीं श्री देव शास्त्र गुरु कृत्रिमाकृत्रिम जिन चैत्य-चैत्यालय अनन्तानन्त सिद्ध परमेष्ठी विद्यमान
विंशति तीर्थकर सिद्ध क्षेत्र समूह अनर्घ पद प्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- तीन लोक तिहूँ काल के, नमू सर्व अरहंत।

अष्ट द्रव्य से पूजकर, पाऊँ भव का अन्त॥

ॐ ह्रीं श्री त्रिलोक एवं त्रिकाल वर्ती तीर्थकर जिनेन्द्रेभ्योः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्पांजलिं क्षिपेत् (कायोत्सर्ग कुरु...)

स्तवन

दोहा- समवशरण जिनदेव का, जग में मंगलकार।
भक्ति करते भाव से, पाने शिवपद द्वार॥

(शम्भू छन्द)

मानस्तम्भ में ध्वज पंक्ति शुभ, दश प्रकार होती मनहार।
तीन परिधि वाले मण्डप हैं, गोपुर हैं चउदिश में चार॥
चतुर शिल्पियों से कल्पित हैं, रचनाएँ संकल्पातीत।
होता है अभिषेक सुदर्शन, क्रीड़ाएँ हैं उपमातीत॥1॥
बने हुए गृह नाटक हेतु, अनुपम हैं जो शुभ अविकार।
बजता है संगीत वहाँ पर, अतिशय कारी मंगलकार॥
विकसित हुए कमल पुष्पों से, शरद ऋतु से शुभ आकाश।
चन्द्र और ग्रह ताराओं से, मानों होता दिव्य प्रकाश॥2॥
पुष्पकारिणी और वापिका, शुभम् दीर्घिका है मनहार।
इत्यादि से भरे जलाशय, शोभित होते हैं सुखकार॥
हैं प्रत्येक द्रव्य इक अठ शत्, झारी दर्पण कलश महान।
पंखा ध्वज स्वस्तिक छत्रत्रय, चंवर ढैरते देव प्रधान॥3॥
विस्मयकारी गुण से संयुत, झण-झण शब्द करें मनहार।
घंटा बजते मध्यम ध्वनि से, सारे जग में मंगलकार॥
गंधकुटी में सिंहासन पर, दिखते हैं सुन्दर मनहार।
विविध भाँति के वैभव संयुत, श्री जिनेन्द्र हैं मंगलकार॥4॥
भूत भविष्यत् वर्तमान के, इक सौ सत्तर हों तीर्थेश।
धर्म प्रिय जो क्षेत्र लोक में, आर्य खण्ड में रहें विशेष॥
भव भय भ्रमण मैटने हेतु, विनय सहित मैं करूँ नमन।
कर्म नाशकर अपने सारे, सिद्ध शिला पर करूँ गमन॥5॥

g_daaU nyOZ àmaã^

(स्थापना)

तीर्थंकर प्रभु कर्म क्षीण कर, प्रगटाते हैं केवलज्ञान ।
धनद इन्द्र आज्ञा से रचना, करता है स्वर्गों से आन ॥
बारह सभा जहाँ जुड़ती है, जिनवर का होता उपदेश ।
ॐकारमय दिव्य देशना, से पाते प्राणी संदेश ।
पुण्योदय से समवशरण शुभ, जिन दर्शन हमने पाए ।
हृदय कमल में आह्वानन कर, पूजन करने को आए ॥

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्र ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं ।

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं ।

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्र ! अत्र मम् सन्निहितौ भव-भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

अष्टादश दोषों से विरहित अरहंतों को करें नमन ।
जिन वचनों का अमृत पीकर, नाश करें हम जन्म-मरण ॥
तीर्थंकर के समवशरण में, करते भाव सहित वंदन ।
सिद्ध शुद्ध शिवपद पाने को, विशद भाव से है अर्चन ॥1॥

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

छियालिस गुण से मण्डित जिनवर, अर्हंतों के चरण नमन ।
चेतन रस चन्दन पा शीतल, भवाताप का करें हरण ॥
तीर्थंकर के समवशरण में, करते भाव सहित वंदन ।
सिद्ध शुद्ध शिवपद पाने को, विशद भाव से है अर्चन ॥2॥

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय संसारताप विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ।

अनन्त चतुष्टय के धारी जिन, अर्हंतों के चरण नमन ।
चेतन रसमय अक्षत पाकर, भवसागर से करो तरण ॥
तीर्थंकर के समवशरण में, करते भाव सहित वंदन ।
सिद्ध शुद्ध शिवपद पाने को, विशद भाव से है अर्चन ॥3॥

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय अक्षयपद प्राप्ताय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

जन्म समय दश अतिशय पाए, श्री जिनेन्द्र के चरण नमन ।
चेतन रस के पुष्प प्राप्त कर, कामबाण का करें हनन ॥
तीर्थंकर के समवशरण में, करते भाव सहित वंदन ।
सिद्ध शुद्ध शिवपद पाने को, विशद भाव से है अर्चन ॥4॥

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय कामबाण विनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

केवलज्ञान के दश अतिशय शुभ, धारी जिन के चरण नमन ।
चेतन रस चरुवर पाकर के, क्षुधा रोग का करें हनन ॥
तीर्थंकर के समवशरण में, करते भाव सहित वंदन ।
सिद्ध शुद्ध शिवपद पाने को, विशद भाव से है अर्चन ॥5॥

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

देवोपम चौदह अतिशय युत, श्री जिन चरणों करें नमन ।
चेतन ज्ञान दीप ज्योति से, मोह-तिमिर का करें हनन ॥
तीर्थंकर के समवशरण में, करते भाव सहित वंदन ।
सिद्ध शुद्ध शिवपद पाने को, विशद भाव से है अर्चन ॥6॥

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय महामोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

अष्ट प्रातिहार्यों से शोभित, श्री जिनेन्द्र के चरण नमन ।
चेतन गुणमय धूप बनाकर, अष्ट कर्म का करें दहन ॥
तीर्थकर के समवशरण में, करते भाव सहित वंदन ।
सिद्ध शुद्ध शिवपद पाने को, विशद भाव से है अर्चन ॥7॥

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय अष्टकर्म दहनाय धूपं
निर्वपामीति स्वाहा ।

वसु मंगल द्रव्यों से शोभित, गंध कुटी में करें नमन ।
चेतन रस के फल अर्पित कर, मोक्ष सुपद को करें वरण ॥
तीर्थकर के समवशरण में, करते भाव सहित वंदन ।
सिद्ध शुद्ध शिवपद पाने को, विशद भाव से है अर्चन ॥8॥

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय महामोक्षफल प्राप्ताय फलं
निर्वपामीति स्वाहा ।

परमौदारिक देह लब्धि नव, धारी जिनपद है अर्चन ।
चेतन रसमय अर्घ्य बनाकर, प्रभु अनर्घ्य पद करें वरण ॥
तीर्थकर के समवशरण में, करते भाव सहित वंदन ।
सिद्ध शुद्ध शिवपद पाने को, विशद भाव से है अर्चन ॥9॥

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय अनर्घपद प्राप्ताय अर्घ्यं
निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा- पुष्पाञ्जलि करते यहाँ, विविध पुष्प ले हाथ ।
विविध गुणों की प्राप्ति हो, झुका रहे हम माथ ॥

(दिव्य पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

दोहा- शांतिधारा के लिए, प्रासुक लाए नीर ।
अष्ट कर्म का नाश हो, मिटे विभव की पीर ॥

(शान्तये शांतिधारा)

जाप्य मंत्र- ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री चतुर्विंशति तीर्थकरेभ्यो नमः ।

जयमाला

दोहा- रचना करते इन्द्र शुभ, समवशरण में आन ।
जयमाला गाते विशद, पाने पद निर्वाण ॥

(शम्भु छन्द)

मानस्तम्भ सरोवर निर्मल, जलयुत खाई पुष्पवाटी ।
कोट नाट्यशाला द्वितियोपवन, बाद वेदि के ध्वज आदी ॥
कोट कल्पतरु कोट सुपरिवृत, स्तूप प्रासादों की पंक्ति ।
स्वच्छ प्रकर में सुर नर मुनिगण, पीठाग्रे जिनकी जगति ॥1॥
कोष चार सौ तक सुभिक्षता, होता है आकाश गमन ।
वध न होवे किसी जीव का, चतुर्दिशा में हों दर्शन ॥
पूर्ण अन्त हो उपसर्गों का, करते नहीं हैं कवलाहार ।
सर्व जगत की विद्याओं पर, पाया है जिनने अधिकार ॥2॥
अर्धमागधी भाषा पावन, सर्व प्राणियों की हितकार ।
सर्व जगत के जीवों में हो, मैत्री भाव का शुभ संचार ॥
छह ऋतुओं के फल के गुच्छे, पत्ते और खिलें शुभ फूल ।
वृक्ष सुशोभित होते पावन, मंगलकारी हों अनुकूल ॥3॥
पृथ्वी रत्न मई हो सुन्दर, निर्मल होती काँच समान ।
हो अनुकूल गमन वायु का, मानो करती हो सम्मान ॥
परम सुगन्धित वायु पावन, से आच्छादित हो भू-भाग ।
इक योजन पर्यन्त पूर्णतः, नहीं रहे दुर्गन्ध विभाग ॥4॥

श्री विहार में पद के नीचे, पद्मराग मणि श्रेष्ठ रहा।
 केसर युक्त अतुल सुखकारी, स्वर्ण पत्र संयुक्त कहा॥
 एक कमल रहता ऐसे ही, सप्त कमल आगे मानो।
 सप्त कमल चरणों के तल में, पन्द्रह का वर्ग कमल जानो॥6॥
 झुकी हुई ज्यों शालि ब्रीहि, धान्य आदि धारण करती।
 करती है रोमांच प्राप्त जो, शायद ज्यों वर्षा करती॥
 शरद ऋतु के काल में निर्मल, सरवर सम जो होवे खास।
 रहित धूलि आदि मल से शुभ, शोभित होता है आकाश॥6॥
 इन्द्रों की आज्ञा से सारे, देवादि भी करें विहार।
 आओ-आओ शीघ्र यहाँ पर, करते हैं वह सभी पुकार॥
 ज्योतिष व्यन्तर वैमानिक सब, देवों का करते आह्वान।
 चारों ओर बुलावा देकर, करते हैं प्रभु का सम्मान॥7॥
 सहस रश्मि की कान्ती को भी, तिरस्कृत करता है मनहार।
 धर्मचक्र आगे चलता है, सर्व जगत् में मंगलकार॥
 श्री विहार में इसी तरह से, मंगल द्रव्य रहें शुभ साथ।
 दर्पण आदि अष्ट कहीं जो, उनके स्वामी हैं जिननाथ॥8॥
 हरित मणि से निर्मित पत्रों, की छाया है सघन महान्।
 शोक निवारी तरु अशोक है, शोभा युक्त रही पहचान॥
 बकुल मालती आदि पुष्पों, से आच्छादित हो आकाश।
 पुष्प वृष्टि होने से लगता, मानो आया हो मधुमास॥9॥
 नेत्र कमल दल के समान शुभ, नेत्रों वाले यक्ष महान्।
 लीला पूर्वक चंवर युगल जो, ढौर रहे हैं प्रभु पद आन॥

भेद मिटाए दिन रात्रि का, भामण्डल अति शोभावान।
 सप्त भवों का दर्शायक है, करता है प्रभु का सम्मान॥10॥
 श्रेष्ठ वासुरी आदि उत्तम, बाद्यो सहित दुन्दुभि श्रेष्ठ।
 बार-बार गम्भीर शब्द जो, करे ताल के साथ यथेष्ट॥
 बहुत विशाल नील मणियों से, शुभ निर्मित है दण्ड महान्।
 अति मनोज्ञ आभा से संयुत, तीन छत्र हैं शोभावान॥11॥
 कर्ण हृदय को हरने वाली, दिव्य ध्वनि अनुपम गम्भीर।
 चार कोश तक चतुर्दिशा में, श्रवण करें धारण कर धीर॥
 स्फटिक मणि की शिला से, निर्मित सिंहासन सुन्दर मनहार।
 सिंहों का शुभ है प्रतीक जो, समवशरण अति मंगलकार॥12॥
 चौतिश अतिशय रहे श्रेष्ठ गुण, इस जग में जिनके सुखकार।
 अष्ट लक्ष्मियाँ प्रातिहार्य की, इन गुण का पाए आधार।
 अन्य महत् गुण से संयुक्त हैं, श्री जिनेन्द्र देवाधिदेव।
 तीन लोक के नाथ श्री जिन, अर्हन्तों को नमन् सदैव॥13॥

दोहा- करते हैं हम वन्दना, भक्ति भाव के साथ।

अष्ट द्रव्य से पूजकर, चरण झुकाते माथ॥

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति
 स्वाहा।

दोहा- चरण शरण हो आपकी, भव-भव में हर बार।

मिला नहीं हमको विशद, जब तक शिवपद द्वार॥

(इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

मानस्तम्भ के अर्घ्य

जब केवल ज्ञान प्रकट होता, तब देव शरण में आते हैं।
वह समवशरण रचना करते, शुभ मानस्तम्भ बनाते हैं॥
हम मानस्तम्भ में पूरब के, जिन बिम्बों को करते वन्दन।
शुभ अर्घ्य बनाकर के पावन, हम भाव सहित करते अर्चन॥1॥
ॐ ह्रीं पूर्वदिक् मानस्तम्भ स्थित चतुर्दिक् जिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन समवशरण के दक्षिण में, शुभ मानस्तम्भ बना मनहार।
जिनबिम्ब विराजे हैं जिसमें, चारों ही दिश में मंगलकार॥
हम मानस्तम्भ में दक्षिण के, जिन बिम्बों को करते वन्दन।
शुभ अर्घ्य बनाकर के पावन, हम भाव सहित करते अर्चन॥2॥
ॐ ह्रीं दक्षिणदिक् मानस्तम्भ स्थित चतुर्दिक् जिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवशरण के पश्चिम में शुभ, मानस्तम्भ बना मनहार।
जिनबिम्ब विराजे हैं जिसमें, चारों ही दिश में मंगलकार॥
हम मानस्तम्भ में पश्चिम के, जिन बिम्बों को करते वन्दन।
शुभ अर्घ्य बनाकर के पावन, हम भाव सहित करते अर्चन॥3॥
ॐ ह्रीं पश्चिमदिक् मानस्तम्भ स्थित चतुर्दिक् जिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ समवशरण के उत्तर में शुभ, मानस्तम्भ बना मनहार।
जिनबिम्ब विराजे हैं जिसमें, चारों ही दिश में मंगलकार॥
हम मानस्तम्भ में उत्तर के, जिन बिम्बों को करते वन्दन।
शुभ अर्घ्य बनाकर के पावन, हम भाव सहित करते अर्चन॥4॥
ॐ ह्रीं उत्तरदिक् मानस्तम्भ स्थित चतुर्दिक् जिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

8 भूमियों के अर्घ्य

(शम्भू छन्द)

समवशरण के चतुर्दिशा में, प्रासाद बना है मनहारी।
चैत्य भूमि पहली है जिसमें, जिसकी शोभा विस्मयकारी॥
शोभित होते जिन मंदिर शुभ, जिनबिम्ब रहे मंगलकारी।
अर्चा करके बन जाएँ हम, समवशरण के अधिकारी॥1॥

ॐ ह्रीं चतुर्दिश चैत्यभूमि जिनालय संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रथम भूमि के आगे वेदी, गोपुर बने हैं चारों ओर।
द्वितीय भूमि रही खातिका, करती मन को भाव विभोर॥
कमल खिले हैं जिसमें अनुपम, दिखती है जो मनहारी।
अर्चा करके बन जाएँ हम, समवशरण के अधिकारी॥2॥

ॐ ह्रीं खातिका भूमि संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लता भूमि तृतीय कहलाई, वल्ली वनयुत अपरम्पार।
पुष्प खिले हैं जिसमें अनुपम, भँवरे करते हैं गुंजार॥
आह्लादित करती है मन को, भवि जीवों को सुखकारी।
अर्चा करके बन जाएँ हम, समवशरण के अधिकारी॥3॥

ॐ ह्रीं लता भूमि संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वल्ली वन के चतुर्दिशा में, परकोटा है गोपुर युक्त।
चतुर्थ भूमि उपवन है अनुपम, तरु अशोक से है संयुक्त॥
तरु के ऊपर चतुर्दिशा में, जिन प्रतिमाएँ मनहारी।
अर्चा करके बन जाएँ हम, समवशरण के अधिकारी॥4॥

ॐ ह्रीं उपवन भूमि मध्ये तरु अशोकवृक्ष परिसंयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवशरण में उपवन भूमि, दक्षिण दिश में मंगलकार।
सप्तच्छद तरुवर शोभित है, पत्र पुष्पयुत अपरम्पार॥
तरु के ऊपर चतुर्दिशा में, जिन प्रतिमाएँ मनहारी।
अर्चा करके बन जाएँ हम, समवशरण के अधिकारी॥5॥

ॐ ह्रीं उपवन भूमि मध्ये सप्तच्छद वृक्ष-परिसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय
अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवशरण में उपवन भूमि, पश्चिम दिश में श्रेष्ठ महान।
चम्पक तरु शोभित है अनुपम, जिसका कौन करे गुणगान॥
तरु के ऊपर चतुर्दिशा में, जिन प्रतिमाएँ मनहारी।
अर्चा करके बन जाएँ हम, समवशरण के अधिकारी॥6॥

ॐ ह्रीं उपवन भूमि मध्ये चम्पक वृक्ष-परिसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय
अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवशरण में उपवन भूमि, उत्तर वन में अतिशयकार।
आम्र वृक्ष तरुवर है अनुपम, पत्र पुष्प युत मंगलकार॥
तरु के ऊपर चतुर्दिशा में, जिन प्रतिमाएँ मनहारी।
अर्चा करके बन जाएँ हम, समवशरण के अधिकारी॥7॥

ॐ ह्रीं उपवन भूमि मध्ये आम्र वृक्ष-परिसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय
अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ध्वज भूमि पञ्चम है भाई, ध्वज लहराएँ चारों ओर।
दश प्रकार चिन्हों से चिन्हित, करतीं मन को भाव-विभोर॥
आह्लादित करती है मन को, भवि जीवों के मनहारी।
अष्ट द्रव्य से पूज रहे हम, श्री जिनेन्द्र पद शुभकारी॥8॥

ॐ ह्रीं ध्वज भूमि मध्ये आम्र वृक्ष-परिसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय
अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कल्पवृक्ष भूमि षष्ठी है, जिसकी महिमा रही महान।
तरुवर है सिद्धार्थ नमेरु, जिसका कौन करे गुणगान॥
वृक्ष मूल में सिद्ध बिम्ब शुभ, शोभित होते अविकारी।
अष्ट द्रव्य से पूज रहे हम, श्री जिनेन्द्र पद शुभकारी॥9॥

ॐ ह्रीं कल्पवृक्ष भूमि सिद्धार्थ वृक्ष-परिसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय
अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कल्पवृक्ष भूमि है षष्ठी, वृक्ष रहा मंदार महान।
नाम रहा सिद्धार्थ मनोहर, जिसके बीचोंबीच प्रधान॥
वृक्ष मूल में सिद्ध बिम्ब शुभ, शोभित होते अविकारी।
अष्ट द्रव्य से पूज रहे हम, श्री जिनेन्द्र पद शुभकारी॥10॥

ॐ ह्रीं कल्पवृक्ष भूमि मंदार वृक्ष-परिसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय
अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पारिजात सिद्धार्थ वृक्ष शुभ, जिसकी महिमा अपरम्पार।
कल्पवृक्ष भूमि षष्ठी में, शोभित होते मंगलकार॥
वृक्ष मूल में सिद्ध बिम्ब शुभ, शोभित होते अविकारी।
अष्ट द्रव्य से पूज रहे हम, श्री जिनेन्द्र पद शुभकारी॥11॥

ॐ ह्रीं कल्पवृक्ष भूमि पारिजात वृक्ष-परिसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय
अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

संतानक सिद्धार्थ वृक्ष शुभ, शोभित होता मंगलकार।
कल्पवृक्ष भूमि षष्ठी में, महिमा जिसकी विस्मयकार॥
वृक्ष मूल में सिद्ध बिम्ब शुभ, शोभित होते अविकारी।
अष्ट द्रव्य से पूज रहे हम, श्री जिनेन्द्र पद शुभकारी॥12॥

ॐ ह्रीं कल्पवृक्ष भूमि संतानक वृक्ष-परिसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय
अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भवन भूमि सप्तम है बन्धु, बनी वीथिका चारों ओर।
सिद्ध बिम्ब जिसमें शोभित हैं, करते मन को भाव-विभोर॥
प्रथम वीथिका में बिम्बों की, महिमा है अति मनहारी।
अष्ट द्रव्य से पूज रहे हम, श्री जिनेन्द्र पद शुभकारी॥13॥

ॐ ह्रीं भवन भूमि प्रथम वीथिका संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं
निर्वपामीति स्वाहा।

श्रेष्ठ वीथिकाओं से सज्जित, भवन भूमि सप्तम भाई।
जिनबिम्बों से शोभित अनुपम, महिमा जग में सुखदायी॥
द्वितीय वीथिका में बिम्बों की, महिमा है अतिशयकारी।
अष्ट द्रव्य से पूज रहे हम, श्री जिनेन्द्र पद शुभकारी॥14॥

ॐ ह्रीं भवन भूमि द्वितीय वीथिका संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं
निर्वपामीति स्वाहा।

सप्तम भूमि भवन कही है, बनी वीथिकाएँ मनहार।
सिद्ध बिम्ब हैं चतुर्दिशा में, अतिशयकारी मंगलकार॥
तृतीय वीथिका शोभित होती, समवशरण में सुखकारी।
अष्ट द्रव्य से पूज रहे हम, श्री जिनेन्द्र पद शुभकारी॥15॥

ॐ ह्रीं भवन भूमि तृतीय वीथिका संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं
निर्वपामीति स्वाहा।

समवशरण में सप्तम भूमि, उपवन भू कहलाती है।
श्रेष्ठ वीथिकाओं से सज्जित, मंगल मानी जाती है॥
चतुर्थ वीथिका में शोभित हैं, सिद्ध बिम्ब मंगलकारी।
अष्ट द्रव्य से पूज रहे हम, श्री जिनेन्द्र पद शुभकारी॥16॥

ॐ ह्रीं भवन भूमि चतुर्थ वीथिका संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं
निर्वपामीति स्वाहा।

श्री मण्डप भूमि है अष्टम, समवशरण में रही महान।
मुनि आर्यिका देव-देवियों, नर पशु का जिनमें स्थान॥
बारह कोठे होते अनुपम, भवि जीवों के शुभकारी।
अष्ट द्रव्य से पूज रहे हम, श्री जिनेन्द्र पद शुभकारी॥17॥

ॐ ह्रीं श्री मण्डप भूमि संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(छन्द)

रत्नों से मंडित प्रथम पीठ, शुभ समवशरण में है पावन।
सुर धर्म चक्र ले खड़े हुए, आह्लादित करते हैं तन मन॥
जो परम पूज्य परमेश्वर हैं, त्रिभुवन स्वामी कहलाते हैं।
हम अर्घ्य चढ़ाकर चरणों में, प्रभु सादर शीश झुकाते हैं॥18॥

ॐ ह्रीं प्रथम पीठ संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मणि मुक्ता युक्त पीठ द्वितीय, आठों दिश में ध्वज लहराएँ।
नव निधी द्रव्य मंगल आठों, घट धूप शुभम् शोभा पाएँ॥
जो परम पूज्य परमेश्वर हैं, त्रिभुवन स्वामी कहलाते हैं।
हम अर्घ्य चढ़ाकर चरणों में, प्रभु सादर शीश झुकाते हैं॥19॥

ॐ ह्रीं द्वितीय पीठ संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अतिशय वंदित शुभ गंध कुटी, है तृतीय पीठ पर कमलासन।
चक्र अंगुल अधर श्री जिनवर, उनका चलता जग में शासन॥
जो परम पूज्य परमेश्वर हैं, त्रिभुवन स्वामी कहलाते हैं।
हम अर्घ्य चढ़ाकर चरणों में, प्रभु सादर शीश झुकाते हैं॥20॥

ॐ ह्रीं तृतीय पीठ संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अथ श्री मंडप भूमि पूजा

स्थापना (शम्भु छन्द)

रत्नों के स्तम्भों पर शुभ, मुक्ता मालादि से पूर्ण ।
दिव्य श्री मण्डप भूमि है, अष्टम द्वादश गण परिपूर्ण ॥
इनमें गणधर मुनि सब तिष्ठें, जिनका हम करते आह्वान ।
जिनवर समवशरण जो पूजे, जग में वह हो जाये महान ॥
श्री मण्डप भूमि में जाकर, पूजा का सौभाग्य मिले ।
हृदय सरोवर में मेरे भी, विशद ज्ञान का दीप जले ॥

ॐ ह्रीं मण्डप भूमि समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्र ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वानम् ।
ॐ ह्रीं मण्डप भूमि समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं ।
ॐ ह्रीं मण्डप भूमि समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्र ! अत्र मम् सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम् ।

अथ अष्टक (चाल छन्द)

यमुना का जल भर लाए, प्रभु चरणों धार कराए ।
श्री मण्डप भू सुखदाई, हम पूज रहे हैं भाई ॥
प्रभु तीर्थंकर पद धारी, हैं जग में मंगलकारी ।
हम आठों द्रव्य चढ़ाते, पद सादर शीश झुकाते ॥1॥

ॐ ह्रीं मण्डप भूमि समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्राय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।

मलयागिरि चंदन लाए, भव नाश हेतु हम आए ।
श्री मण्डप भू सुखदाई, हम पूज रहे हैं भाई ॥
प्रभु तीर्थंकर पद धारी, हैं जग में मंगलकारी ।
हम आठों द्रव्य चढ़ाते, पद सादर शीश झुकाते ॥2॥

ॐ ह्रीं मण्डप भूमि समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्राय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ।

मोती सम अक्षत लाए, अक्षय सुख पाने आए ।
श्री मण्डप भू सुखदाई, हम पूज रहे हैं भाई ॥
प्रभु तीर्थंकर पद धारी, हैं जग में मंगलकारी ।
हम आठों द्रव्य चढ़ाते, पद सादर शीश झुकाते ॥3॥

ॐ ह्रीं मण्डप भूमि समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्राय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।

शुभ कमल केतकी लाए, संताप नशाने आए ।
श्री मण्डप भू सुखदाई, हम पूज रहे हैं भाई ॥
प्रभु तीर्थंकर पद धारी, हैं जग में मंगलकारी ।
हम आठों द्रव्य चढ़ाते, पद सादर शीश झुकाते ॥4॥

ॐ ह्रीं मण्डप भूमि समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्राय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।

ताजे नैवेद्य बनाए, हम क्षुधा नशाने आए ।
श्री मण्डप भू सुखदाई, हम पूज रहे हैं भाई ॥
प्रभु तीर्थंकर पद धारी, हैं जग में मंगलकारी ।
हम आठों द्रव्य चढ़ाते, पद सादर शीश झुकाते ॥5॥

ॐ ह्रीं मण्डप भूमि समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्राय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

घृतमय दीपक शुभ लाये, प्रभु मोह तिमिर नश जाए ।
श्री मण्डप भू सुखदाई, हम पूज रहे हैं भाई ॥
प्रभु तीर्थंकर पद धारी, हैं जग में मंगलकारी ।
हम आठों द्रव्य चढ़ाते, पद सादर शीश झुकाते ॥6॥

ॐ ह्रीं मण्डप भूमि समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ।

यह धूप दशांग चढ़ाएँ, भव-भव के करम नशाएँ ।
श्री मण्डप भू सुखदाई, हम पूज रहे हैं भाई ॥

प्रभु तीर्थंकर पद धारी, हैं जग में मंगलकारी ।

हम आठों द्रव्य चढ़ाते, पद सादर शीश झुकाते ॥7॥

ॐ ह्रीं मण्डप भूमि समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्राय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीफल थाली भर लाएँ, प्रभु शिवपद हेतु चढ़ाएँ ।

श्री मण्डप भू सुखदाई, हम पूज रहे हैं भाई ॥

प्रभु तीर्थंकर पद धारी, हैं जग में मंगलकारी ।

हम आठों द्रव्य चढ़ाते, पद सादर शीश झुकाते ॥8॥

ॐ ह्रीं मण्डप भूमि समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्राय फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

प्रभु हेमपात्र बनवाएँ, सब आठों द्रव्य सजाएँ ।

श्री मण्डप भू सुखदाई, हम पूज रहे हैं भाई ॥

प्रभु तीर्थंकर पद धारी, हैं जग में मंगलकारी ।

हम आठों द्रव्य चढ़ाते, पद सादर शीश झुकाते ॥9॥

ॐ ह्रीं मण्डप भूमि समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

(सोरठा)

क्षीरोदधि शुभ नीर, कनक सु झारी में भरा ।

जिनपद द्वारे नीर, शांतिधारा त्रय करें ॥ शांतये शांतिधारा

कमल केतकी पुष्प, रजत पात्र में लाए हम ।

कर पुष्पाञ्जलि पुञ्ज, जिनपद में हम चढ़ाते ॥ दिव्य पुष्पाञ्जलिः

अथ प्रत्येक अर्घ्य

दोहा- परमेश्वर हे परम गुरु, त्रिभुवन के तुम नाथ ।

प्रभु को पूजें हम सदा, पुष्पाञ्जलि के साथ ॥

इति मण्डलस्योपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(कवित छन्द)

वृषभदेव के समवशरण में, द्वादश कोठे सुन्दर जान ।

द्वादश के शुभ वर्ग से भाजित, बारह योजन रहा महान ॥

चौंसठ ऋद्धि धारी गणधर, का पहले में है स्थान ।

श्री मण्डप युत समवशरण शुभ, सुर नर मुनि से वन्द्य महान ॥1॥

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री आदिनाथ जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

अजितनाथ के समवशरण में, श्री मण्डप भू शोभामान ।

बारह के शुभ वर्ग से भाजित, एक सौ पन्द्रह कोस महान ॥

अनुपम मणिमय दीवालों में, बारह कोठे बने प्रधान ।

श्री जिनवर का अतिशय ऐसा, सुर नर मुनि से पूज्य महान ॥2॥

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री अजितनाथ जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

संभव जिन का समवशरण शुभ, पुष्पमाल संयुक्त प्रधान ।

द्वादश के शुभ वर्ग से भाजित, एक सौ दश कोसों का मान ॥

जहाँ देवियाँ कल्पवासिनी, द्वितीय कोठे में मनहार ।

श्री मण्डप युत समवशरण शुभ, सुर नर मुनि से वन्द्य महान ॥3॥

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री संभवनाथ जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

अभिनन्दन के समवशरण में, सम्यग्दृष्टि जीव महान ।

द्वादश के शुभ वर्ग से भाजित, एक सौ पाँच कोस का मान ॥

रही आर्थिकाएँ अतिशय शुभ, तृतीय कोठे में मनहार ।

श्री मण्डप युत समवशरण है, सुर नर मुनि युत मंगलकार ॥4॥

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री अभिनन्दन जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

सुमतिनाथ का समवशरण शुभ, सुर असुरों के विघ्न नशाय ।

द्वादश के जो वर्ग से भाजित, गणधर मुनि सौ कोस बताय ॥

श्रेष्ठ देवियाँ ज्योतिष वासी, चौथे कोठे में पहिचान ।

श्री मण्डप युत समवशरण शुभ, सुर नर मुनि से पूज्य महान ॥5॥

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री सुमतिनाथ जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

पद्म प्रभो के समवशरण में, मण्डप मणिमय शोभ रहा ।

द्वादश के जो वर्ग से भाजित, मात्र पंचानवे कोस कहा ॥

व्यन्तर देवियाँ जिनभक्ति युत, पंचम कोठे में पहिचान ।

समवशरण की महिमा ऐसी, सुर नर मुनि से पूज्य महान ॥6॥

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री पद्मनाथ जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्री मण्डप भू जिन सुपार्श्व की, रत्न स्तम्भों पर शुभकार ।

द्वादश के जो वर्ग से भाजित, नब्बे कोस रही मनहार ॥

जहाँ देवियाँ भवनवासिनी, षष्ठम् कोठे में पहिचान ।

श्री मण्डप भू समवशरण में, सुर नर मुनि से पूज्य महान ॥7॥

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री सुपार्श्व जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

रत्नकांति युत श्री मण्डप में, चन्द्रनाथ जिन शोभ रहे ।

बारह के शुभ वर्ग से भाजित, श्री जिन पचासी कोस कहे ॥

देव भवनवासी का भाई, सप्तम कोठे में स्थान ।

श्री मण्डप भू समवशरण में, सुर नर मुनि से पूज्य महान ॥8॥

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री चन्द्रप्रभु जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

पुष्पदंत का समवशरण शुभ, तीन लोक में सुन्दर जान ।

द्वादश के शुभ वर्ग से भाजित, अस्सी कोस का रहा महान ॥

किन्नरादिक व्यन्तर वासी का, अष्टम कोठे में स्थान ।

श्री मण्डप भू समवशरण में, सुर नर मुनि से पूज्य महान ॥9॥

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री सुविधिनाथ जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

शीतल जिन के समवशरण में, भवि जीवों का है स्थान ।

द्वादश के शुभ वर्ग से भाजित, मात्र पचहत्तर कोस महान ॥

सूर्यादिक ज्योतिष देवों का, नवम् कोष्ठ में शुभ स्थान ।

श्री मण्डप भू समवशरण शुभ, सुर नर मुनि से पूज्य महान ॥10॥

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री शीतलनाथ जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रेयो जिन की महिमा ऐसी, प्रकट करें भवि जीव स्वभाव ।

द्वादश के शुभ वर्ग से भाजित, सत्तर कोस में रहे प्रभाव ॥

देव इन्द्र सोलह स्वर्गों के, दशम कोष्ठ में रहे महान ।

श्री मण्डप युत समवशरण में, सुर नर मुनि पाते स्थान ॥12॥

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री श्रेयांसनाथ जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

वासुपूज्य जिन समवशरण में, सब सिद्धि का देते दान ।

बारह के शुभ वर्ग से भाजित, पैसठ कोस का रहा प्रमाण ॥

ग्यारहवें कोठे में राजा, चक्रवर्ती नर का स्थान ।

श्री मण्डप भू समवशरण में, सुर नर मुनि से पूज्य महान ॥13॥

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री वासुपूज्य जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

(छन्द-जोगीरासा)

विमलनाथ के समवशरण में, मैत्री भाव जगाए ।

द्वादश के शुभ वर्ग से भाजित, साठ कोस मुनि गाए ॥

सिंह गजादिक पशु जीव सब, द्वादश कोष्ठ में आवें ।

श्री मण्डप युत समवशरण में, सुर नर मुनि सब जावें ॥14॥

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री विमलनाथ जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्री मण्डप में आकर भविजन, जिन भक्ति सब पाते ।

द्वादश के जो वर्ग से भाजित, पचपन कोस बताते ॥

जिन अनन्त के दर्शन करके, निज भव रोग नसावें ।
श्री मण्डप युत समवशरण में, सुर नर मुनि सब जावें ॥15॥

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

धनद रचित श्री मण्डप भाई, अतिशयकारी जानो ।
बारह के शुभ वर्ग से भाजित, पचास कोस का मानो ॥
धर्मनाथ के समवशरण में, प्राणी वैभव पावें ।
श्री मण्डप युत समवशरण में, सुर नर मुनि सब आवें ॥16॥

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जय-जय शांतिनाथ सुखकारी, जिन सम है न कोय ।
श्री मण्डप युत समवशरण शुभ, सुर नर पूजित होय ॥
तीनों पद से युक्त जिनेश्वर, समवशरण में गाये ।
द्वादश के शुभ वर्ग से भाजित, पैतालिस कोस बताए ॥17॥

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री शांतिनाथ जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

तीनों पद से युक्त जिनेश्वर, समवशरण में आये ।
द्वादश के शुभ वर्ग से भाजित, चालिस कोस बताए ॥
कुन्थुनाथ जिनस्वामी भगवन, वीतराग गुण पाये ।
श्री मण्डप की महिमा ऐसी, सुर नर पूज रचाये ॥18॥

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री कुन्थुनाथ जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

(शम्भू छन्द)

श्री मण्डप में सुर ललनाएँ, जिन भक्ति शुभ करे महान ।
बारह के शुभ वर्ग से भाजित, पैतिस कोस का है स्थान ॥
कामदेव चक्रेश जिनेश्वर, अर जिन त्रय पद के धारी ।
श्री मण्डप में सुर नर मुनि से, वंदित प्रभु जी अविकारी ॥19॥

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री अरहनाथ जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

मल्लिनाथ जिन समवशरण में, भविजन पूजित मंगलकार ।
तव श्री मण्डप तीन लोक में, भवि मन को सुख का आधार ॥

बारह के शुभ वर्ग से भाजित, तीस कोस का रहा प्रमाण ।
जिन मण्डप की महिमा ऐसी, सुर नर मुनि पूजित भगवान ॥20॥

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री मल्लिनाथ जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

दया धुरन्धर विघ्न महीधर, मुनिसुव्रत जयवंत जिनेश ।
दिव्य श्री मण्डप प्रभु का लख, नत मस्तक हों जीव विशेष ॥
बारह के शुभ वर्ग से भाजित, पच्चिस कोस का रहा महान ।
श्री मण्डप की महिमा ऐसी, तीन लोक मनहारी मान ॥21॥

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री मुनिसुव्रतनाथ जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

चरण जजै जो जीव प्रभु के, पावैं अक्षय निधि भंडार ।
धनद रचित श्री मण्डप में तो, जिन की महिमा अपरम्पार ॥
बारह के शुभ वर्ग से भाजित, बीस कोस का रहा प्रमाण ।
नमि जिनवर की महिमा ऐसी, तीन लोक में पूज्य महान ॥22॥

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री नमिनाथ जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

केवल ज्योति जगाकर नेमि, श्री मंडप में शोभा पाय ।
करुणासागर कृपासिन्धु तव, नाम लेत भव दुःख पलाय ॥
बारह के शुभ वर्ग से भाजित, पन्द्रह कोस का रहा प्रमाण ।
श्री मण्डप की महिमा ऐसी, गणधर मुनि से पूज्य महान ॥23॥

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

पार्श्वनाथ के श्री मण्डप में, श्रुतज्ञानी मुनि रहे महान ।
बारह के शुभ वर्ग से भाजित, मात्र कोस दस रहा प्रमाण ॥

समवशरण के श्री मण्डप में, सुख अनुभूति प्राणी पाय ।
प्रभु की अद्भुत महिमा ऐसी, मैत्री भाव सदा जग जाय ॥24॥

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

केवलज्ञानी श्री जिनवर को, इन्द्र मुनि सब टेकें माथ ।
महावीर का अतिशय ऐसा, सिंह गाय सब बैठें साथ ॥
पाँच के घन का दस गुणाकर, नौ से भाजित धनुष प्रमाण ।
श्री मंडप की पूजा करके पाएँ, श्री सुख को भगवान् ॥25॥

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री महावीर जिनेन्द्राय जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा- तीर्थकर चौबीस जिन, पूजे मन वच काय ।
श्री मंडप भू में स्वयं, सब श्रिय सुख मिल जाय ॥

(शांतये शांतिधारा)

दोहा- विविध भाँति के पुष्प ले, अर्चा करें महान् ।
पुष्पाञ्जलिं करके विशद, गाते हैं गुणगान ॥

(पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

जयमाला

दोहा- समवशरण राजित प्रभो, श्री मण्डप सुखदाय ।
गाऊँ शुभ जयमालिका, तुष्टि करो जिनराय ॥

(चौपाई)

जय-जय तीर्थकर शिवकारी, धनद रचित मंडप दुःखहारी ।
जय-जय मानस्तम्भ मनोहर, श्री मण्डप त्रिभुवन में सुन्दर ॥
द्वादश कोष्ठ युक्त शुभ मण्डप, चहुँदिश लगे मनोहर मण्डप ।
शुभ अक्षीण महत् है मनहर, प्रथम कोष्ठ में मुनिवर गणधर ॥
द्वितीय कल्पवासिनी देवी, जो हैं जिनवर के पदसेवी ।

तृतीय कोष्ठ में हैं आर्थिकाएँ, फिर ज्योतिष्कों की ललनाएँ ॥
पंचम में व्यंतर महिलाएँ, षष्ठम् भवनवासी ललनाएँ ।
भवनवासी सप्तम में जानो, अष्टम में व्यंतर पहिचानो ॥
नवम कोष्ठ ज्योतिषी का भाई, दशम् कोष्ठ वैमानिक पाई ।
ग्यारहवे में पुरुष बताए, पशु बारहवे में बतलाए ।
द्वादश सभा रही मनहारी, श्री मण्डप भूमि है प्यारी ॥
तीन लोक के प्रभु अधिकारी, जय-जय जिनवर अविकारी ।
जय-जय मण्डप भू हितकारी, तव दर्शन भवि कल्मषहारी ॥
मंडप भू महिमा नित न्यारी, समवशरण भवि क्लेश निवारी ।
स्तुतियाँ गणधर कई गावें, जिन पूजा कर हर्ष मनावें ॥
जय-जय श्री मण्डप को ध्याएँ, कर्म कालिमा दूर भगाएँ ।
श्री मण्डप की आरति गावें, सुख संपद शिवपद को पावें ॥
हम भी प्रभु की पूज रचाएँ, अनुक्रम से शिवपद को पाएँ ।
यही भावना एक हमारी, पूर्ण करो तुम हे त्रिपुरारी ॥
जग के तुम त्राता कहलाए, अतःद्वार हम तुमरे आए ।
पूजा का फल हम पाएँगे, निश्चय से शिवपुर जाएँगे ॥
भव का भ्रमण मिटेगा सारा, लक्ष्य यही है एक हमारा ।

सोरठा- पूजें अर्घ्य चढ़ाय, श्री मण्डप जिनराज को ।
सहजानन्द लहाय, शिवपुर वास करें सदा ॥

ॐ ह्रीं समवशरण स्थित श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा- समवशरण में पूजते, हम चौबीस जिनेश ।
भव सिन्धु से मुक्त हो, पाने निज का देश ॥

शांतये शांतिधारा (दिव्य पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

4 चतुष्टय 8 प्रातिहार्य अर्घ्य

ज्ञानावरण कर्म के क्षय से, ज्ञानानन्त जगाते ।
 स्याद्वादमय प्रभु की वाणी, सब सुखकारी गाते ॥
 अनंत चतुष्टय मंडित श्री जिन, समवशरण में जानो ।
 पूजें वसु विधि अर्घ्य चढ़ाकर, शिव सुखकारी मानो ॥1॥

ॐ ह्रीं अनन्त केवलज्ञान संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

कर्म दर्शनावरण नाशकर, दर्शन गुण प्रगटाते ।
 प्रभु का दर्शन पाकर नित ही, भव के दुःख क्षय जाते ।
 अनंत चतुष्टय मंडित श्री जिन, समवशरण में जानो ।
 पूजें वसु विधि अर्घ्य चढ़ाकर, शिव सुखकारी मानो ॥2॥

ॐ ह्रीं अनन्त केवलदर्शन संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

केवलज्ञानी जिन परमात्म, चार चतुष्टय पाते ।
 मोहनीय कर्मों के क्षय से, सुख अनन्त प्रगटाते ॥
 अनंत चतुष्टय मंडित श्री जिन, समवशरण में जानो ।
 पूजें वसु विधि अर्घ्य चढ़ाकर, शिव सुखकारी मानो ॥3॥

ॐ ह्रीं अनन्त सुख संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

कभी अन्त न होय वीर्य का, बल अनन्त प्रगटाते ।
 अन्तराय कर्मों के क्षय से, बालानन्त सुख पाते ॥
 अनंत चतुष्टय मंडित श्री जिन, समवशरण में जानो ।
 पूजें वसु विधि अर्घ्य चढ़ाकर, शिव सुखकारी मानो ॥4॥

ॐ ह्रीं अनन्त वीर्य संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

(जोगीरासा छन्द)

तीर्थकर के समवशरण में, तरु अशोक शुभ होते ।
 पाकर के सानिध्य प्रभु का, शोक पूर्णतः खोते ॥
 प्रातिहार्य से शोभित जिनवर, त्रिभुवन में हितकारी ।
 पूजें वसु विधि अर्घ्य चढ़ाकर, पूजा शिव पदकारी ॥1॥

ॐ ह्रीं अशोक तरु प्रातिहार्य संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

रत्नजड़ित सिंहासन पर प्रभु, समवशरण में सोहें ।
 तीर्थकर की शान्त सौम्य छवि, मुनि मन को नित मोहें ॥
 प्रातिहार्य से शोभित जिनवर, त्रिभुवन में हितकारी ।
 पूजें वसु विधि अर्घ्य चढ़ाकर, पूजा शिव पदकारी ॥2॥

ॐ ह्रीं सिंहासन प्रातिहार्य संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

तीर्थकर के मस्तक पर नित, छत्र त्रय शुभ जानो ।
 तीन लोक के अधिपति जिन, जग में सुन्दर मानो ॥
 प्रातिहार्य से शोभित जिनवर, त्रिभुवन में हितकारी ।
 पूजें वसु विधि अर्घ्य चढ़ाकर, पूजा शिव पदकारी ॥3॥

ॐ ह्रीं छत्रत्रय प्रातिहार्य संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

(शम्भु छन्द)

घातिकर्म के क्षय से प्रभु के, सिर पीछे भामण्डल होय ।
 भवि के सात भवों का दर्शन, प्रभु के भामण्डल में सोय ॥
 प्रातिहार्य से शोभित जिनवर, त्रिभुवन में शांतिधारी ।
 पूजें वसु विधि अर्घ्य चढ़ाकर, है पूजा शिव पदकारी ॥4॥

ॐ ह्रीं भामण्डल प्रातिहार्य संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

प्रभु के सिर पर देवों द्वारा, चौसठ चँवर दिव्य ढुरते।
प्रभु को नमस्कार करने से, भव्य मोक्ष लक्ष्मी वरते॥
प्रातिहार्य से शोभित जिनवर, त्रिभुवन में शांतिकारी।
पूजें वसु विधि अर्घ्य चढ़ाकर, है पूजा शिव पदकारी॥5॥

ॐ ह्रीं चौसठ चँवर प्रातिहार्य संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देव दुन्दुभि गगन मध्य शुभ, जिन के आगे अतिशयकार।
तीर्थकर के धर्मराज्य की, सूचक है जो अपरम्पार॥
प्रातिहार्य से शोभित जिनवर, त्रिभुवन में शांतिकारी।
पूजें वसु विधि अर्घ्य चढ़ाकर, है पूजा शिव पदकारी॥6॥

ॐ ह्रीं देव-दुन्दुभि प्रातिहार्य संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देवों द्वारा प्रभु मस्तक पर, पुष्पवृष्टि शुभ नित होवे।
मानो प्रभु के दिव्य गुणों की, पंक्ति प्रसारित ही होवे॥
प्रातिहार्य से शोभित जिनवर, त्रिभुवन में शांतिकारी।
पूजें वसु विधि अर्घ्य चढ़ाकर, है पूजा शिव पदकारी॥7॥

ॐ ह्रीं पुष्पवृष्टि प्रातिहार्य संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवशरण में प्रभु के मुख से, ध्वनि निरक्षर खिरती है।
प्रभु की वाणी मृदु हितकारी, जग का कालुष हरती है॥
प्रातिहार्य से शोभित जिनवर, त्रिभुवन में शांतिकारी।
पूजें वसु विधि अर्घ्य चढ़ाकर, है पूजा शिव पदकारी॥8॥

ॐ ह्रीं भामण्डल प्रातिहार्य संयुक्त-समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गणधर सहित सप्त ऋषि

वृषभादि महावीर प्रभु के, गणधर जग में हुए महान।
तीर्थकर की दिव्य देशना, का करते हैं जो गुणगान॥

वृषभसेन आदि चौदह सौ, बावन हुए हैं मंगलकार।
उनके चरणों विशद भाव से, वन्दन मेरा बारम्बार॥1॥

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्राय वृषभसेनादि द्विपञ्चशतक अधिक चतुर्दश शत गणधर अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वृषभादि चौबीसों जिन के, पूरब धारी हुए महान।
चालिस सहस्र नौ सौ सैंतिस मुनि, का हम करते हैं गुणगान।
वीतरागता के धारी मुनि, की महिमा है अपरम्पार।
अर्घ्य चढ़ाकर वन्दन करते, उनके चरणों बारम्बार॥2॥

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्राय चत्वारिंशद सहस्र नवशत सप्त त्रिंशतवादि मुनिवरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बीस लाख अरु पाँच सौ पचपन, शिक्षक मुनिवर रहे महान।
वर्तमान चौबीस जिनेश्वर, के संग में करते गुणगान॥
वीतरागता के धारी मुनि, की महिमा है अपरम्पार।
अर्घ्य चढ़ाकर वन्दन करते, उनके चरणों बारम्बार॥3॥

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्राय विंशति लक्ष पञ्चशत पञ्च पञ्चाशत् शिक्षक मुनिवरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एक लाख सत्ताइस सहस्र अरु, छह सौ अवधि ज्ञानधारी।
समवशरण में शोभा पाए, श्रेष्ठ मुनीश्वर अविकारी॥
वीतरागता के धारी मुनि, की महिमा है अपरम्पार।
अर्घ्य चढ़ाकर वन्दन करते, उनके चरणों बारम्बार॥4॥

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्राय एकलक्ष सप्तविंशति सहस्र षडशत् अवधिज्ञानी मुनिवरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सहस्र पचहत्तर एक लाख वसु, शतक मुनि केवल ज्ञानी।
समवशरण में चौबीसी के, हुए मोक्ष के अनुगामी॥

वीतरागता के धारी मुनि, की महिमा है अपरम्पार।

अर्घ्य चढ़ाकर वन्दन करते, उनके चरणों बारम्बार॥5॥

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्राय एकलक्ष पञ्चसप्तति सहस्र अष्टशत केवलज्ञानी मुनिवरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एक लाख अरु सहस्र पैतालिस, नौ सौ पाँच मुनि शुभकार।

मनःपर्यय शुभज्ञान के धारी, चौबिस जिन के मंगलकार॥

वीतरागता के धारी मुनि, की महिमा है अपरम्पार।

अर्घ्य चढ़ाकर वन्दन करते, उनके चरणों बारम्बार॥6॥

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्राय एकलक्ष पञ्चचत्वारिंशद् सहस्र नवशत विपुलमति ज्ञानधर मुनिवरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पैंतिस सहस्र लाख दो नौ सौ, मुनि विक्रिया के धारी।

चौबिस जिन के भक्त हुए हैं, समवशरण में शुभकारी॥

वीतरागता के धारी मुनि, की महिमा है अपरम्पार।

अर्घ्य चढ़ाकर वन्दन करते, उनके चरणों बारम्बार॥7॥

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्राय द्वयलक्ष पञ्चविंशति सहस्र नवशत विक्रियाधर मुनिवरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एक लाख चौबीस सहस्र अरु, त्रय शत मुनिवादी गाए।

समवशरण में चौबिस जिन के, साथ मुनि शोभा पाए॥

वीतरागता के धारी मुनि, की महिमा है अपरम्पार।

अर्घ्य चढ़ाकर वन्दन करते, उनके चरणों बारम्बार॥8॥

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्राय एकलक्ष चतुर्विंशति सहस्र त्रयशतवादी मुनिवरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लख अट्ठाइस सहस्र अड़तालिस, सप्त संघ के रहे मुनीश।

चौबिस जिन के समवशरण में, जिनपद झुका रहे हम शीश॥

वीतरागता के धारी मुनि, की महिमा है अपरम्पार।

अर्घ्य चढ़ाकर वन्दन करते, उनके चरणों बारम्बार॥9॥

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्राय अष्टाविंशति लक्ष अष्ट चत्वारिंशद सहस्र सर्व मुनिवरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ऋद्धियों के आठ अर्घ्य

बुद्धि ऋद्धि के भेद अठारह, अवधि मनःपर्यय केवल।

बीज कोष्ठ पादानुसारिणी, प्रज्ञाश्रमण ऋद्धि मंगल॥

प्रत्येक बुद्धि वादित्व पूर्व दश, अरु चौदह पूरब में चित्त।

दूर गंध स्पर्श श्रवण रस, संभिन्न श्रोतृ अष्टांग निमित्त॥

सर्व ऋद्धियों से मुनिवर की, प्रखर बुद्धि हो सम्यक्ज्ञान।

अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाकर, करते हम उनका गुणगान॥1॥

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिन मुनिभ्योऽष्टादश भेदयुत बुद्धि ऋद्धिधारक सर्व ऋषिश्चरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नौ हैं भेद ऋद्धि चारण के, अग्नि जल वायु आकाश।

पुष्प मेघ जल ज्योतिष जंघा, चारण भेद कहे यह खास॥

गमन करें ऋद्धिधारी मुनि, जीव नहीं तब पावें कष्ट।

आत्मध्यान तप के द्वारा मुनि, अष्ट कर्म कर देते नष्ट॥2॥

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिन मुनिभ्यो नव भेदयुतचारण ऋद्धिधारक सर्व ऋषिश्चरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रेष्ठ विक्रिया ऋद्धि के शुभ, एकादश हैं भेद प्रधान।

अणिमा महिमा लघिमा गरिमा, प्राप्ति अरु प्राकाम्य महान्॥

हैं ईशत्व वशित्व भेद यह, कामरूपिणी अन्तर्धान।

अप्रतिघात ऋद्धि को पाने, करूँ मुनीश्वर का गुणगान॥3॥

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिन मुनिभ्यो एकादश भेदयुत विक्रिया ऋद्धिधारक सर्व ऋषिश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जैनागम में तप ऋद्धि के, भाई भेद बताए सात ।
उग्र तप्त अरु घोर महातप, उग्र तपोतप हैं विख्यात ॥
घोर पराक्रम अघोर ब्रह्मचर्य, तप के अतिशय रहे महान् ।
तपधारी मुनिवर की पूजा, करके करते हैं गुणगान ॥4॥

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिन मुनिभ्यो सप्तभेदयुत तप ऋद्धिधारक सर्व ऋषिश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

बल ऋद्धि के तीन भेद शुभ, आगम में बतलाते हैं ।
मन बल वचन काय बल ऋद्धि, जैन मुनीश्वर पाते हैं ॥
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाते, पावन ऋद्धि पाने को ।
कर्म नाशकर अपने सारे, शिवपुर नगरी जाने को ॥5॥

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिन मुनिभ्यो त्रयभेदयुत बल ऋद्धिधारक सर्व ऋषिश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

अष्ट भेद औषधि ऋद्धि के, आमषौषधि रहा प्रधान ।
खेल्लौषधि अरु जल्ल मल्ल शुभ, विडौषधि सवौषधि वान ॥
मुख निर्विष दृष्टि निर्विष यह, औषधि ऋद्धि अष्ट प्रकार ।
ऋद्धिधारी मुनिवर को हम, करते वंदन बारंबार ॥6॥

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिन मुनिभ्यो अष्टभेदयुत औषधि ऋद्धिधारक सर्व ऋषिश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

भेद कहे छह रस ऋद्धि के, जैनागम में श्री जिनेश ।
आशीर्विष दृष्टि विष ऋद्धि, पाते हैं जिन मुनि विशेष ॥
क्षीर मधु अमृतसावि घृत, सावि रस ऋद्धि को धार ।
मुनिवर रस ऋद्धि को पाते, तप के द्वारा विविध प्रकार ॥7॥

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिन मुनिभ्यो षड्भेदयुत रस ऋद्धिधारक सर्व ऋषिश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

शुभ अक्षीण महानस ऋद्धि, के दो भेद कहे तीर्थेश ।
प्रथम कहा अक्षीण महानस, और महालय कहा विशेष ॥
श्रेष्ठ ऋद्धि के धारी मुनिवर, जग में होते अपरंपार ।
उनके चरणों वंदन करते, भाव सहित हम बारंबार ॥8॥

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिन मुनिभ्यो अक्षीण महानस एवं अक्षीण महालय ऋद्धिधारक सर्व ऋषिश्वरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

बुद्धि आदि अष्ट ऋद्धियों के, चौंसठ बतलाए प्रभेद ।
भाव सहित हम पूजा करते, हरो मुनीश्वर मेरा खेद ॥
ऋद्धि सिद्धियों को तजकर मम, सिद्ध शिला पर हो विश्राम ।
सर्व ऋद्धि धारी मुनियों के, श्री चरणों में विशद प्रणाम ॥9॥

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुःषष्टि ऋद्धिधारक अतीत अनागत वर्तमानकाल सम्बन्धी सर्व जिन ऋषीश्वरेभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जिनधर्मादि के अर्घ्य

वस्तु का स्वभाव धर्म है, क्षमा आदि दश धर्म रहे ।
रत्नत्रय शुभ धर्म अहिंसा, परम धर्म जिनदेव कहे ॥
ऐसे पावन परम धर्म को, पाने हेतु आये नाथ ! ।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाकर, चरणों झुका रहे हैं माथ ॥1॥

ॐ ह्रीं दशलक्षणोत्तमादि त्रिलक्षण सम्यक्दर्शन-ज्ञान-चारित्र्य रूप वस्तु स्वभावयुक्त अहिंसादि व्रत रूप पावन जिनधर्माय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

एक सौ बारह कोटि तिरासी, लाख रहे अट्ठावन हजार ।
और पञ्च पद द्वादशांग के, सर्वलोक में मंगलकार ॥

ग्यारह अंग पूर्व चौदह युत, जैनागम है अपरंपार।

भाव सहित हम अर्घ्य चढ़ाकर, वंदन करते बारंबार॥2॥

ॐ ह्रीं द्वादशाधिक एकशत कोटि त्रयोशीतिलक्ष अष्ट पंचाशत सहस्र पंच पद संयुक्त एकादशांग चतुर्दश पूर्व रूप द्वादशांग जिनागमाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नौ सौ पचिस कोटि लाख हैं, त्रैपन अरु अट्ठाइस हजार।

बावन कम जिनबिम्ब लोक के, जिनकी महिमा अपरम्पार॥

वीतराग जिनबिम्ब मनोहर, अतिशयकारी मंगलकार।

भाव सहित हम अर्घ्य चढ़ाकर, वंदन करते बारम्बार॥3॥

ॐ ह्रीं नवशत पंचविंशति कोटि त्रिपंचाशतलक्ष अष्टाविंशति सहस्र नवशताष्ट चत्वारिंशत प्रमित अकृत्रिम जिनबिम्बेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आठ करोड़ लाख छप्पन अरु, सहस्र सत्तानवे सौ हैं चार।

इक्यासी हैं अधिक जिनालय, अतिशयकारी अपरम्पार॥

घंटा तोरण युक्त मनोहर, जिन चैत्यालय मंगलकार।

भाव सहित हम अर्घ्य चढ़ाकर, वंदन करते बारम्बार॥4॥

ॐ ह्रीं अष्टकोटि षट्पंचाशत लक्ष सप्त नवति सहस्र चतुःशत एकाशीति संख्या-प्रमिताकृत्रिम जिनालयेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्हत् सिद्ध आचार्य उपाध्याय, सर्वसाधु जग में पावन।

जैनागम जिनधर्म चैत्य अरु, चैत्यालय हैं मनभावन॥

समवशरण मण्डल विधान यह, हमने किया है मंगलकार।

हाथ जोड़कर वंदन करते, नवदेवों को बारम्बार॥5॥

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ अर्हत् सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधु जिनधर्म जिनागम जिनचैत्य चैत्यालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सोरठा- विघ्न क्षोभ क्षय होय, बढ़े शांति अरु पुष्टता।

सर्व अमंगल खोय, श्रेष्ठ होय मंगल सदा॥

पुष्पांजलिं क्षिपेत्

जाप्य :- ॐ ह्रीं समवशरणस्थ अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधु जिनधर्म जिनागम जिनचैत्य चैत्यालयेभ्यो नमः स्वाहा। (9, 27 या 108 बार जाप करें।)

समुच्चय जयमाला

दोहा- समवशरण चौबीस जिन, के हैं पूज्य त्रिकाल।

यहाँ समुच्चय रूप से, गाते हैं जयमाल॥

(शम्भू छन्द)

पूर्व पुण्य के प्रबल योग से, तीर्थंकर पद पाते हैं।

सौ-सौ इन्द्र वन्दना करने, चरण-शरण में आते हैं॥

समवशरण की रचना करते, भक्ति भाव से अपरम्पार।

मणि रत्नों से सज्जित करते, चतुर्दिशा में बारम्बार॥1॥

ऋषभदेव के समवशरण का, बारह योजन था विस्तार।

आधा-आधा योजन घटते, वीर का इक योजन शुभकार॥

समवशरण की रचना उन्नत, चारों ओर से गोलाकार।

बीस सहस्र सीढ़ियाँ जानो, इक-इक हाथ की अपरम्पार॥2॥

चार कोट अरु पञ्च वेदी के, बीच वेदियाँ जानो आठ।

चारों ओर वीथियाँ पावन, गंधकुटी का अनुपम ठाठ॥

पार्श्व वीथियों में दो-दो शुभ, श्रेष्ठ वेदियाँ रही महान।

सभी भूमियों के पथ होते, सुन्दर तोरण द्वार प्रधान॥3॥

द्वारों पर नव निधि धूप घट, मंगल द्रव्य रहे मनहार।

साढ़े बारह कोटि वाद्य शुभ, देवों द्वारा बजें अपार॥

प्रतिद्वार के दोनों बाजू, एक-एक नाटकशाला।
जहाँ देव कन्याएँ करती, नृत्य हृदय हरने वाला ॥4॥
धूलिशाल के चतुर्दिशा में, धर्मचक्रधारी हैं चार।
मानस्तम्भ बने चारों दिश, मद हरने वाले मनहार ॥
प्रथम भूमि चैत्यालय की शुभ, मंदिर चारों ओर महान।
बनी वीथिकाएँ फिर सुन्दर, जल से पूरित रहीं प्रधान ॥5॥
द्वितीय कोट फिर पुष्प वाटिका, की पंक्ति शुभ रही महान।
वन भू-वृक्ष अशोक आम्र तरु, चम्पक सप्तवर्ण पहिचान।
तृतीय कोट फिर कल्पवृक्ष भू, वेदी बनी नृत्यशाला ॥
भवन भूमि स्तूप मनोहर, ध्वजा पंक्तियों की माला ॥6॥
रहा महोदय मण्डप अनुपम, श्रुतकेवली का व्याख्यान।
केवलज्ञान लब्धि के धारी, भी देते उपदेश महान ॥
चौथा कोट शाल है सुन्दर, कल्पवासी जिसके रक्षक।
श्री मण्डप भू जिसके आगे, गंधकुटी के आगे तक ॥7॥
गंधकुटी में तीन पीठिका, कमल के ऊपर सिंहासन।
तरु अशोक सिर तीन छत्र हैं, भामण्डल द्युति मय दर्पण।
चतुर्दिशा में जिन के दर्शन, दिव्य ध्वनि का हो उच्चार ॥
द्वादश सभा शोभती अनुपम, पुष्पवृष्टि हो मंगलकार ॥8॥
गणधर चौदह सौ त्रेपन हैं, मुनि संघ हैं सात प्रकार।
लख अट्ठाइस सहस्र अड़तालिस, संख्या मुनियों की मनहार ॥
चालिस सहस्र नव सौ सैंतिस शुभ, पूरबधारी मुनिवर गाये।
शिक्षक मुनि बीस लाख अरु, पाँच सौ पचपन बतलाये ॥9॥
एक लाख सत्ताइस सहस्र अरु, छह सौ अवधि ज्ञानधारी।
केवलज्ञानी इक लाख पचत्तर, सहस्र आठ सौ शुभकारी ॥

एक लाख सहस्र पैतालिस, मुनिवर नौ सौ पाँच महान।
विपुलमति मनःपर्यय ज्ञानी, करते थे प्रभु का गुणगान ॥10॥
विक्रियाधारी मुनि लाख दो, पैतिस सहस्र नौ सौ गुणवान।
एक लाख चौबीस सहस्र अरु, शतक तीन मुनि वादी मान।
लाख चवालिस सहस्र चौरानवे, साढ़े छः सौ आर्यिका जान।
श्रावक लाख रहे अड़तालिस, श्राविका लाख छियानवे मान ॥11॥
तेरह सौ आठ कहे हैं जिनवर, अनुबद्ध केवली मंगलकार।
ग्यारह सौ व्यासी परम ऋषि, सामान्य मुनि का नहीं है पार ॥
सिद्ध यति चौबीस लाख अरु, चौसठ हजार सौ चार कहे।
शुभ यक्ष यक्षिणी चौबिस थे, जो बनकर प्रभु के भक्त रहे ॥12॥
ग्यारह हजार शत पाँच एक कम, मुनि संग में मोक्ष गये।
अष्टापद सम्मेद ऊर्जयन्त, चम्पा पावा से कर्म क्षये ॥
चौदह दिन वृषभेष वीर जिन, दो दिन कीन्हें योग निरोध।
एक माह में बाइस जिनों ने, योग रोध कर पाया बोध ॥13॥
ऋषभ नेमि जिन वासुपूज्य प्रभु, पद्मासन से मोक्ष गये।
अन्य सभी इक्कीस जिनेश्वर, खड्गासन से कर्म क्षये ॥
चौबीसों जिन के समवशरण की, रचना होवे एक समान।
समवशरण में जिन अर्चा कर, विशद पाएँ हम पद निर्वाण ॥14॥

दोहा- समवशरण में शोभते, जिन चौबिस तीर्थेश।

अष्ट द्रव्य का अर्घ्य हम, अर्पित करें विशेष ॥

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्राय जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा- स्वर्ग मोक्ष का धाम है, समवशरण मनहार।

अर्घ्य चढ़ाकर वन्दना, करते बारम्बार ॥

॥ इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ॥

आरती

आज करें हम समवशरण की, आरति मंगलकारी ।
 घृत के दीप जलाकर लाए, प्रभुवर के दरबार ॥
 हो जिनवर, हम सब उतारें तेरी आरती ।
 कर्म घातिया नाश किए प्रभु, केवलज्ञान जगाया ।
 अनन्त चतुष्टय पाए तुमने, सुख अनन्त को पाया ॥
 हो जिनवर, हम सब उतारें तेरी आरती ।
 इन्द्र की आज्ञा पाकर भाई, धन कुबेर यहाँ आया ।
 स्वर्ण और रत्नों से सज्जित, समवशरण बनवाया ॥
 हो जिनवर, हम सब उतारें तेरी आरती ।
 स्वर्ग से आकर इन्द्रों ने शुभ, प्रातिहार्य प्रगटाए ।
 प्रभु की भक्ति अर्चा करके, सादर शीश झुकाए ॥
 हो जिनवर, हम सब उतारें तेरी आरती ।
 जिनबिम्बों से सज्जित अनुपम, अष्ट भूमियाँ जानो ।
 श्रेष्ठ सभाएँ सुर नर मुनि की, विस्मयकारी मानो ॥
 हो जिनवर, हम सब उतारें तेरी आरती ।
 ॐकारमय दिव्य देशना, अतिशय प्रभु सुनाए ।
 'विशद' पुण्य का योग मिला यह, प्रभु के दर्शन पाए ॥
 हो जिनवर, हम सब उतारें तेरी आरती ।

प्रशस्ति

मध्य लोक के मध्य है जम्बूद्वीप महान ।
 मन्दर मेरु मध्य में, बतलाए भगवान ॥1॥
 भरत क्षेत्र दक्षिण दिशा, में सोहे मनहार ॥
 ऐरावत शुभ जानिए, उत्तर में शुभकार ॥2॥
 पूरब-पश्चिम दिशा में, है विदेह शुभ क्षेत्र ।
 जिसमें बतिस श्रेष्ठ हैं, मंगलमय उप क्षेत्र ॥3॥
 कर्म भूमियाँ यह कहीं, आगम में शुभकार ।
 द्वीप धातकी खण्ड में, दूना है विस्तार ॥4॥
 पुष्करार्द्ध में भी सभी, क्षेत्र कहे तीर्थेश ।
 द्वीप धातकी सम सभी, रचना कही विशेष ॥5॥
 कर्म भूमियों में सदा, होते हैं तीर्थेश ।
 समवशरण रचना करें, मिलकर इन्द्र विशेष ॥6॥
 पूजा अर्चा हेतु यह, लिखा गया विधान ।
 लघु कथन में यह किया, भक्ति मय गुणगान ॥7॥
 शहर भीलवाड़ा रहा, जैनों का स्थान ।
 तिलक नगर में हुआ शुभ, श्रेष्ठ पञ्च कल्याण ॥8॥
 पच्छिस सौ छत्तिस, रहा श्री वीर निर्वाण ।
 अगहन शुक्ला पञ्चमी को, पाया अवशान ॥9॥
 भविजन के हित हेतु, यह रचना है शुभकार ।
 विशद पुण्य का यह, रहा अनुपम शुभ आधार ॥10॥
 लघु धी से यह शुभ, लघु समवशरण मनहार ।
 लिखा श्रेष्ठ विधान यह, अतिशय मंगलकार ॥11॥

प.पू. 108 आचार्य श्री विशदसागरजी महाराज की पूजन

पुण्य उदय से हे ! गुरुवर, दर्शन तेरे मिल पाते हैं।
श्री गुरुवर के दर्शन करके, हृदय कमल खिल जाते हैंङ्क
गुरु आराध्य हम आराधक, करते उर से अभिवादन।
मम् हृदय कमल में आ तिष्ठो, गुरु करते हैं हम आह्वानङ्क

ॐ ह्रीं 18 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् इति आह्वानन् अत्र तिष्ठ तिष्ठ उः
ठः स्थापनम्। अत्र मम् सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

सांसारिक भोगों में फँसकर, ये जीवन वृथा गंवाया है।
रागद्वेष की वैतरणी से, अब तक पार न पाया हैङ्क
विशद सिंधु के श्री चरणों में, निर्मल जल हम लाए हैं।
भव तापों का नाश करो, भव बंध काटने आये हैंङ्क

ॐ ह्रीं 18 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्राय जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

क्रोध रूप अग्नि से अब तक, कष्ट बहुत ही पाये हैं।
कष्टों से छुटकारा पाने, गुरु चरणों में आये हैंङ्क
विशद सिंधु के श्री चरणों में, चंदन घिसकर लाये हैं।
संसार ताप का नाश करो, भव बंध नशाने आये हैंङ्क

ॐ ह्रीं 18 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्राय संसार ताप विध्वंशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

चारों गतियों में अनादि से, बार-बार भटकाये हैं।
अक्षय निधि को भूल रहे थे, उसको पाने आये हैंङ्क
विशद सिंधु के श्री चरणों में, अक्षय अक्षत लाये हैं।
अक्षय पद हो प्राप्त हमें, हम गुरु चरणों में आये हैंङ्क

ॐ ह्रीं 18 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्राय अक्षय पद प्राप्ताय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

काम बाण की महावेदना, सबको बहुत सताती है।
तृष्णा जितनी शांत करें वह, उतनी बढ़ती जाती हैङ्क
विशद सिंधु के श्री चरणों में, पुष्प सुगंधित लाये हैं।
काम बाण विध्वंश होय गुरु, पुष्प चढ़ाने आये हैंङ्क

ॐ ह्रीं 18 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्राय कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

काल अनादि से हे गुरुवर ! क्षुधा से बहुत सताये हैं।
खाये बहु मिष्ठान जरा भी, तृप्त नहीं हो पाये हैंङ्क
विशद सिंधु के श्री चरणों में, नैवेद्य सुसुन्दर लाये हैं।
क्षुधा शांत कर दो गुरु भव की ! क्षुधा मेटने आये हैंङ्क

ॐ ह्रीं 18 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्राय क्षुधा रोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोह तिमिर में फँसकर हमने, निज स्वरूप न पहिचाना।
विषय कषायों में रत रहकर, अंत रहा बस पछतानाङ्क
विशद सिंधु के श्री चरणों में, दीप जलाकर लाये हैं।
मोह अंध का नाश करो, मम् दीप जलाने आये हैंङ्क

ॐ ह्रीं 18 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्राय मोहान्धकार विध्वंशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अशुभ कर्म ने घेरा हमको, अब तक ऐसा माना था।
पाप कर्म तज पुण्य कर्म को, चाह रहा अपनाना थाङ्क
विशद सिंधु के श्री चरणों में, धूप जलाने आये हैं।
आठों कर्म नशाने हेतु, गुरु चरणों में आये हैंङ्क

ॐ ह्रीं 18 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्राय अष्टकर्म दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

पिस्ता अरु बादाम सुपाड़ी, इत्यादि फल लाये हैं।
पूजन का फल प्राप्त हमें हो, तुमसा बनने आये हैंङ्क
विशद सिंधु के श्री चरणों में, भाँति-भाँति फल लाये हैं।
मुक्ति वधु की इच्छा करके, गुरु चरणों में आये हैंङ्क

ॐ ह्रीं 18 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्राय मोक्ष फल प्राप्ताय फलम् निर्वपामीति स्वाहा।

प्रासुक अष्ट द्रव्य हे गुरुवर ! थाल सजाकर लाये हैं।
महाव्रतों को धारण कर लें, मन में भाव बनाये हैंङ्क
विशद सिंधु के श्री चरणों में, अर्घ्य समर्पित करते हैं।
पद अनर्घ्य हो प्राप्त हमें गुरु, चरणों में सिर धरते हैंङ्क

ॐ ह्रीं 18 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्राय अनर्घ्य पद प्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा- विशद सिंधु गुरुवर मेरे, वंदन करूँ त्रिकाल।
मन-वन-तन से गुरु की, करते हैं जयमालङ्क

गुरुवर के गुण गाने को, अर्पित है जीवन के क्षण-क्षण।
 श्रद्धा सुमन समर्पित हैं, हर्षायें धरती के कण-कणङ्क
 छतरपुर के कुपी नगर में, गूँज उठी शहनाई थी।
 श्री नाथूराम के घर में अनुपम, बजने लगी बधाई थीङ्क
 बचपन में चंचल बालक के, शुभादर्श यूँ उमड़ पड़े।
 ब्रह्मचर्य व्रत पाने हेतु, अपने घर से निकल पड़ेङ्क
 आठ फरवरी सन् छियानवे को, गुरुवर से संयम पाया।
 मोक्ष ज्ञान अन्तर में जागा, मन मयूर अति हर्षायाङ्क
 in vkpk;Z izfr"Bk dk 'kqHk] nks gktj lu~ ik;p jgkA
 rsjg Qjoj h calr iapeh] cus xq# vkpk;Z vgkAA
 तुम हो कुंद-कुंद के कुन्दन, सारा जग कुन्दन करते।
 निकल पड़े बस इसलिए, भवि जीवों की जड़ता हरतेङ्क
 मंद मधुर मुस्कान तुम्हारे, चेहरे पर बिखरी रहती।
 तब वाणी अनुपम न्यारी है, करुणा की शुभ धारा बहती हैङ्क
 तुममें कोई मोहक मंत्र भरा, या कोई जादू टोना है।
 है वेश दिगम्बर मनमोहक अरु, अतिशय रूप सलौना हैङ्क
 हैं शब्द नहीं गुण गाने को, गाना भी मेरा अन्जाना।
 हम पूजन स्तुति क्या जाने, बस गुरु भक्ति में रम जानाङ्क
 गुरु तुम्हें छोड़ न जाएँ कहीं, मन में ये फिर-फिरकर आता।
 हम रहें चरण की शरण यहीं, मिल जाये इस जग की साताङ्क
 सुख साता को पाकर समता से, सारी ममता का त्याग करें।
 श्री देव-शास्त्र-गुरु के चरणों में, मन-वच-तन अनुराग करेंङ्क
 गुरु गुण गाएँ गुण को पाने, औ सर्वदोष का नाश करें।
 हम विशद ज्ञान को प्राप्त करें, औ सिद्ध शिला पर वास करेंङ्क

ॐ ह्रीं 18 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्राय अनर्घ पद प्राप्ताय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गुरु की महिमा अगम है, कौन करे गुणगान।
 मंद बुद्धि के बाल हम, कैसे करें बखानङ्क

इत्याशीर्वादः (पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

आचार्य श्री 108 विशदसागरजी महाराज की आरती

(तर्ज:- माई री माई मुंडेर पर तेरे बोल रहा कागा.....)

जय-जय गुरुवर भक्त पुकारे, आरति मंगल गावे।
 करके आरती विशद गुरु की, जन्म सफल हो जावे॥
 गुरुवर के चरणों में नमन्.....4 मुनिवर के.....
 ग्राम कुपी में जन्म लिया है, धन्य है इन्दर माता।
 नाथूराम जी पिता आपके, छोड़ा जग से नाता॥
 सत्य अहिंसा महाव्रती की.....2, महिमा कहीं न जाये।
 करके आरती विशद गुरु की, जन्म सफल हो जावे॥
 गुरुवर के चरणों में नमन्.....4 मुनिवर के.....
 सूरज सा है तेज आपका, नाम रमेश बताया।
 बीता बचपन आयी जवानी, जग से मन अकुलाया॥
 जग की माया को लखकर के.....2, मन वैराग्य समावे।
 करके आरती विशद गुरु की, जन्म सफल हो जावे॥
 गुरुवर के चरणों में नमन्.....4 मुनिवर के.....
 जैन मुनि की दीक्षा लेकर, करते निज उद्धारा।
 विशद सिंधु है नाम आपका, विशद मोक्ष का द्वारा॥
 गुरु की भक्ति करने वाला.....2, उभय लोक सुख पावे।
 करके आरती विशद गुरु की, जन्म सफल हो जावे॥
 गुरुवर के चरणों में नमन्.....4 मुनिवर के.....
 धन्य है जीवन, धन्य है तन-मन, गुरुवर यहाँ पधारे।
 सगे स्वजन सब छोड़ दिये हैं, आतम रहे निहारे॥
 आशीर्वाद हमें दो स्वामी.....2, अनुगामी बन जायें।
 करके आरती विशद गुरु की, जन्म सफल हो जावे॥
 गुरुवर के चरणों में नमन्...4 मुनिवर के... जय...जय॥

रचयिता : श्रीमती इन्दुमती गुप्ता, श्योपुर